

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 2 अध्याय 3: देवोपासना और भक्ति की श्रेष्ठता

13 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

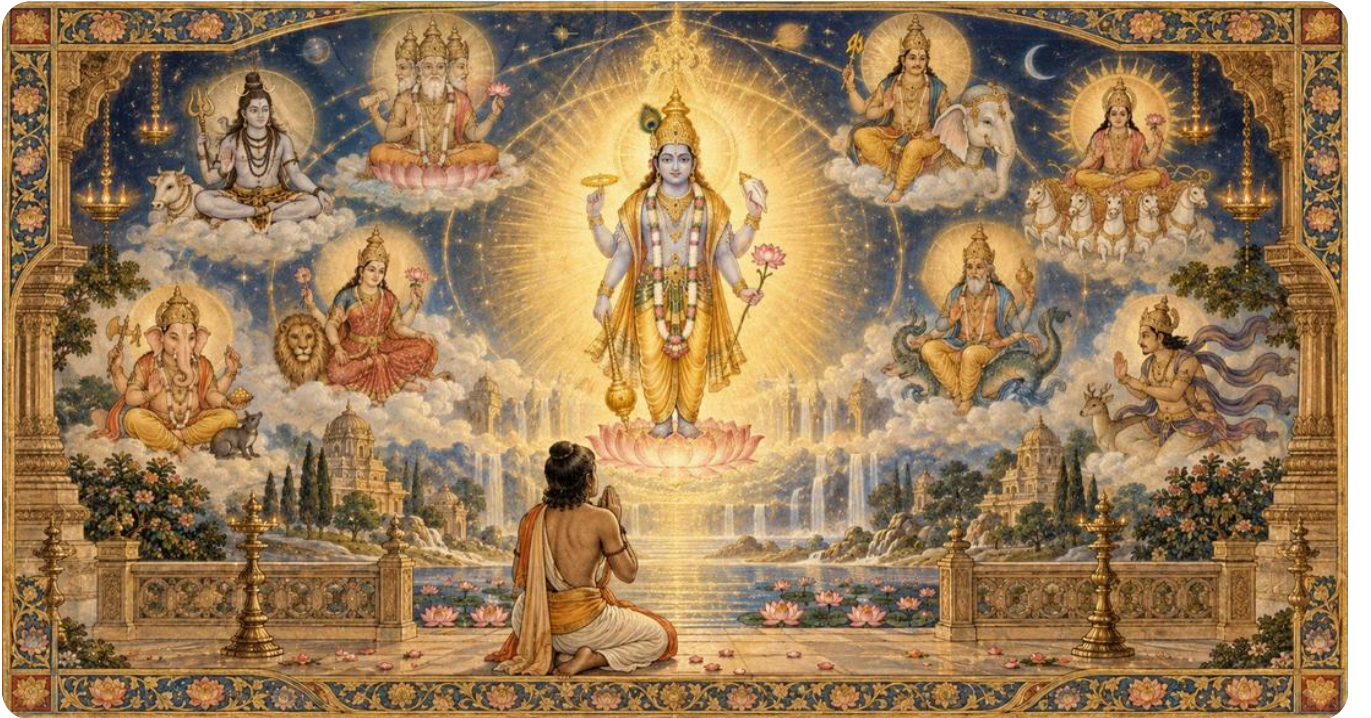
श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



देवताओं का एक मण्डल एक तेजस्वी सभा को घेरे हुए है, जबकि एक भक्त उन सबको पार कर परम पुरुष की ओर मुड़ता है — इस अध्याय की केन्द्रीय शिक्षा एक ही चित्र में।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। श्रीशुकदेव गोस्वामी अब राजा परीक्षित के मूल प्रश्न के प्रति अपने दीर्घ उत्तर को समाप्त करते हैं। प्रथम दो अध्यायों में भगवान् के ब्रह्माण्डीय रूप तथा हृदय में विराजमान उनके आत्मीय चतुर्भुज रूप पर ध्यान सिखाने के पश्चात्, श्रीशुकदेव अब संक्षेप में मानो एक सूची प्रस्तुत करते हैं — किस कामना की पूर्ति के लिए किस देवता की उपासना करनी चाहिए। किन्तु यह सूची केवल इसलिए है कि उसे परे रखा जा सके। इसका सम्पूर्ण उद्देश्य एक बात को असंदिग्ध रूप से स्पष्ट करना है — कि मनुष्य चाहे जो भी चाहे, अथवा कुछ न चाहे, विवेकी आत्मा स्वयं परम पुरुष की ही उपासना करती है। वहाँ से अध्याय की कथा-रचना धीरे से बदल जाती है। नैमिषारण्य में श्रवण करते हुए ऋषि शौनक, कथावाचक सूतजी से परीक्षित की कथा आगे बढ़ाने का अनुरोध करते हैं, और उसके पश्चात् जो आता है वह सम्पूर्ण भागवत में भगवान् के केवल श्रवण, कीर्तन तथा स्मरण के महत्त्व पर सबसे मार्मिक अंशों में से एक है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 2 (द्वितीय स्कन्ध)
- अध्याय: 3 (तृतीय अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: अनेक देवताओं की उपासना अनेक सांसारिक कामनाओं के लिए, और यह प्रमाण कि भगवद्भक्ति उन सबसे श्रेष्ठ है
- मुख्य वक्ता: श्लोक 1-12 में श्रीसुक (श्रीशुकदेव गोस्वामी), परीक्षित को अपना उपदेश समाप्त करते हुए; तत्पश्चात् श्लोक 13-25 में बाह्य कथा-संरचना में शौनक तथा सूत गोस्वामी
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित (श्लोक 1-12); ऋषि शौनक तथा नैमिषारण्य के ऋषि-समुदाय (श्लोक 13-25)
- मुख्य स्थल: गंगा का तट, जहाँ परीक्षित अपने अन्तिम दिनों में उपवास पर बैठे हैं; तथा, बाह्य कथा-संरचना में, नैमिषारण्य का वन-आश्रम जहाँ सूत गोस्वामी सम्पूर्ण भागवत का कथन कर रहे हैं
- केन्द्रीय विषय: विशिष्ट सांसारिक कामनाओं के लिए परम्परागत रूप से उपास्य देवताओं की एक सूची; यह शिक्षा कि भगवद्भक्ति ऐसी समस्त उपासना से श्रेष्ठ है तथा उसका आधार है; तथा भगवान् के नाम एवं कथाओं के श्रवण, कीर्तन तथा स्मरण की महिमा करने वाले श्लोकों की एक शृंखला
- मुख्य श्लोक-परास: स्कन्ध 2, अध्याय 3, श्लोक 1-25
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

श्रीशुकदेव अपना उत्तर समाप्त करते हैं

अध्याय का आरम्भ एक छोटे, शान्त वाक्य से होता है जो अब तक सिखाई गई सभी बातों को समेट देता है। “मैंने तुम्हें वह सब बता दिया जो तुमने मुझसे पूछा था,” श्रीशुकदेव परीक्षित से कहते हैं, “अर्थात् मनुष्यों में विचारशील पुरुषों को अपने अन्त-समय के निकट आने पर क्या करना चाहिए।” इस पंक्ति को यँ ही पढ़कर आगे बढ़ जाना सरल है, परन्तु यह महत्त्वपूर्ण है — यह पुष्टि करती है कि ब्रह्माण्डीय रूप पर ध्यान

(प्रथम अध्याय) तथा भगवान् के व्यक्तिगत रूप पर ध्यान एवं शरीर त्यागने की योग-विधि (द्वितीय अध्याय), दोनों मिलकर परीक्षित के मरणासन्न प्रश्न का श्रीशुकदेव का सम्पूर्ण उत्तर थे। इस अध्याय में जो आगे आता है वह कुछ नया है — मृत्यु के क्षण के लिए निर्देश नहीं, अपितु सामान्यतः मनुष्यों द्वारा की जाने वाली उपासना का एक व्यापक सर्वेक्षण, तथा यह कि वह उपासना अन्ततः किस ओर संकेत करती है।

कामनाओं तथा उनके देवताओं की सूची

आगे भागवत के सबसे व्यवस्थित रूप से संरचित अंशों में से एक आता है — कामनाओं की उन देवताओं के साथ, जिनकी उन्हें पूर्ण करने के लिए परम्परागत रूप से उपासना की जाती है, एक तीव्र, लगभग लयबद्ध सूची। पावन ज्ञान में श्रेष्ठता चाहने वाले को देवताओं के गुरु ऋषि बृहस्पति की उपासना करनी चाहिए; इन्द्रियों की तीक्ष्णता चाहने वाले को इन्द्र की; सन्तान चाहने वाले को प्रजापतियों की आराधना करनी चाहिए। समृद्धि चाहने वाले को दिव्य माया — भगवान् की अपनी शक्ति, प्रकृति की अधिष्ठात्री देवी — की उपासना करनी चाहिए, तथा अथक ऊर्जा चाहने वाले को अग्निदेव की आराधना करनी चाहिए। धन चाहने वाले को वसुओं की उपासना करनी चाहिए; अधिक शक्ति चाहने वाले को रुद्रों की।

सूची आगे बढ़ती है, प्रत्येक श्लोक एक साथ कई युग्मों को समेटता हुआ। अन्न चाहने वाले को देवमाता अदिति की उपासना करनी चाहिए; स्वर्ग चाहने वाले को उनके पुत्रों, द्वादश आदित्यों की आराधना करनी चाहिए। सार्वभौमिकता चाहने वाले को विश्वदेवों की उपासना करनी चाहिए; प्रजा की निष्ठा चाहने वाले शासक को साध्यों की। दीर्घ आयु चाहने वाले को देवताओं के वैद्य, जुड़वा अश्विनीकुमारों की उपासना करनी चाहिए; सुदृढ़ शरीर चाहने वाले को पृथ्वी देवी की; पद की स्थिरता चाहने वाले को पृथ्वी तथा द्यौः — विश्व की दो माताओं — दोनों की संयुक्त आराधना करनी चाहिए। सौन्दर्य चाहने वाले को गन्धर्वों की उपासना करनी चाहिए; सुन्दर पत्नी चाहने वाले को अप्सरा उर्वशी की; सबका आधिपत्य चाहने वाले को स्वयं ब्रह्मा की उपासना करनी चाहिए।

यश चाहने वाले को यज्ञ के अधिष्ठाता के रूप में भगवान् विष्णु की उपासना करनी चाहिए; धन-सम्पदा चाहने वाले को जल के स्वामी वरुण की आराधना करनी चाहिए। विद्या प्राप्त करना चाहने वाले को भगवान् शिव की उपासना करनी चाहिए; दाम्पत्य सुख चाहने वाले को अपने पति के प्रति समर्पित देवी उमा की। पुण्यमय जीवन चाहने वाला भगवान् विष्णु की, तथा वंश-वृद्धि चाहने वाला पितरों की आराधना करे। रक्षा चाहने वाले को यक्षों की उपासना करनी चाहिए; शारीरिक बल चाहने वाले को वायु-देवताओं मरुद्गणों की। राज्य चाहने वाले को एक सम्पूर्ण मन्वन्तर तक शासन करने वाले देवताओं की उपासना करनी चाहिए; तथा जो — किसी भी दुष्ट प्रयोजन से — अभिचार प्रयुक्त करना चाहे, उसे विनाश की अधिष्ठात्री निर्ऋति की आराधना करनी चाहिए। और साधारण इन्द्रिय-सुख चाहने वाले को चन्द्रदेव सोम की उपासना करनी चाहिए।

फिर, सूची के ठीक अन्त में, श्रीशुकदेव एक भिन्न प्रकार की बात रखते हैं — “जो समस्त कामनाओं की समाप्ति चाहता है, उसे प्रकृति से परे भगवान् की आराधना करनी चाहिए।” श्लोक-दर-श्लोक चली आ रही यह सम्पूर्ण सूची इसी एक शान्त मोड़ की ओर बढ़ रही थी।

[चित्र 1: <images/sbw-c2c03-01-catalogue-of-desires.jpg> — यहाँ लगाएँ]

मोड़-बिन्दु: परम पुरुष की उपासना

दसवाँ श्लोक इस अध्याय का विषयगत केन्द्र है, और श्रीशुकदेव इसे बिना किसी शर्त के कहते हैं।

अकामः सर्वकामो वा मोक्षकाम उदारधीः ।

तीव्रेण भक्तियोगेन यजेत पुरुषं परम् ॥ १० ॥

akāmaḥ sarva-kāmo vā mokṣa-kāma udāra-dhīḥ tīvreṇa bhakti-yogena yajeta puruṣam param

अर्थ: किन्तु विवेकी पुरुष को — चाहे वह पूर्णतः निष्काम हो, अथवा समस्त प्रकार की कामनाओं से प्रेरित हो, अथवा मुक्ति ही चाहता हो — तीव्र भक्ति के साथ परम पुरुष की उपासना करनी चाहिए। (स्कन्ध 2, अध्याय 3, श्लोक 10)

श्रीशुकदेव यह नहीं कहते कि विभिन्न देवताओं की उपासना करना अनुचित है। वे यह कहते हैं कि इन्द्र, बृहस्पति अथवा ऊपर वर्णित किसी भी देवता की उपासना करने वालों के लिए भी परम कल्याण अन्ततः केवल भगवान् के प्रति अटूट भक्ति विकसित करने से ही प्राप्त होता है, तथा यह भक्ति विशेष रूप से उनके भक्तों की संगति में ही परिपक्व होती है। उन्हीं भक्तों की संगति में, श्रीहरि के विषय में कथाएँ सुनते हुए, आध्यात्मिक ज्ञान का उदय होता है — वासनाओं की अशान्त लहरें शान्त होती हैं, हृदय शुद्ध होकर आनन्द से भर जाता है, और इन्द्रिय-सुख के प्रति स्वाभाविक विरक्ति के साथ-साथ भक्ति के प्रति बढ़ता हुआ प्रेम उत्पन्न होता है — “जो अन्तिम कल्याण का आदरणीय मार्ग है।” श्रीशुकदेव इस अंश को आदेश के स्थान पर एक प्रश्न के साथ समाप्त करते हैं — श्रीहरि के विषय में ऐसी कथाओं को सुनने का आनन्द एक बार चख लेने के पश्चात्, कौन उसे स्वेच्छा से त्यागना चाहेगा?

[चित्र 2: images/sbw-c2c03-02-devotee-worships-supreme-person.jpg — यहाँ लगाएँ]

शौनक और अधिक कथा माँगते हैं

इस बिन्दु पर कथा-संरचना सहजता से बदल जाती है। अब तक इस अध्याय में जो कुछ भी हुआ है वह गंगा-तट पर मरणासन्न परीक्षित को दिए जा रहे श्रीशुकदेव के उपदेश का ही भाग था। किन्तु सम्पूर्ण भागवत स्वयं दूसरी बार कथित की जा रही है — सूत गोस्वामी द्वारा, नैमिषारण्य के वन में एक दीर्घ यज्ञ कर रहे ऋषि शौनक तथा समस्त ऋषि-समुदाय को। अब यही बाह्य श्रोता-समुदाय बोलता है। शौनक पूछते हैं — श्रीशुक के इन वचनों को सुनकर, भरतवंशियों में श्रेष्ठ राजा परीक्षित ने व्यास-पुत्र से, जो ऋषि होने के साथ-साथ वेदों में भी निपुण थे, आगे और क्या पूछा? और, शौनक जोड़ते हैं, कृपया हमें भी वह सब बताइए, क्योंकि सन्त-पुरुषों की सभा में सदैव ऐसी वार्ता होनी चाहिए जो अन्ततः श्रीहरि की कथा तक ले जाए।

किन्तु सूत के उत्तर देने से पहले, भागवत एक क्षण के लिए इस बात पर ठहरता है कि परीक्षित तथा श्रीशुकदेव के बीच यह वार्तालाप पहले स्थान पर इतना उपयुक्त क्यों था। हमें बताया जाता है कि परीक्षित अपने बचपन से ही भगवान् के महान् भक्त थे — उनके बचपन के खेलों में भी, उनके एक मनोरंजन के रूप में, श्रीकृष्ण की उपासना सम्मिलित थी। और श्रीशुकदेव स्वयं भगवान् वासुदेव के प्रति अनन्य रूप से समर्पित वर्णित हैं। यह स्वाभाविक ही है, भागवत टिप्पणी करता है, कि जहाँ ऐसे दो आत्माएँ मिलती हैं, वहाँ वार्तालाप भगवान् की महिमा की ओर ही मुड़ जाता है।

[चित्र 3: images/sbw-c2c03-03-saunaka-asks-suta.jpg — यहाँ लगाएँ]

भगवान् को कथाएँ सुनना क्यों वैकल्पिक नहीं है

इसके पश्चात् जो आता है वह भागवत में कहीं भी सबसे प्रत्यक्ष तथा अकाट्य अंशों में से एक है — श्लोकों की एक शृंखला जो मानव-जीवन को उसकी उपलब्धियों से नहीं, अपितु इस बात से मापती है कि वह भगवान् के स्मरण में व्यतीत हुआ अथवा नहीं। उदय तथा अस्त होता सूर्य, अब सूत जी ऋषियों से कहते हैं, प्रत्येक मनुष्य के जीवन को व्यर्थ ही चुराता है, सिवाय उसके जो सुयश भगवान् की चर्चा में एक क्षण भी व्यतीत करता है। फिर वे तुलनाएँ आती हैं जो इस अंश को उसकी शक्ति देती हैं — क्या वृक्ष नहीं जीते? क्या लोहार की धौंकनी भी श्वास नहीं लेती? क्या पशु भोजन तथा प्रजनन नहीं करते? केवल जैविक अस्तित्व, ये श्लोक आग्रहपूर्वक कहते हैं, वह नहीं है जो मानव-जीवन को जीने योग्य बनाता है।

जिस मनुष्य ने श्रीकृष्ण की कथा कभी नहीं सुनी, वह — भागवत स्पष्ट रूप से कहता है — कुत्ते, सूअर, ऊँट अथवा गधे से भिन्न नहीं है। जो कान भगवान् के अद्भुत कार्यों को कभी नहीं सुनते, वे केवल छिद्र हैं, किसी वास्तविक प्रयोजन के बिना; जो जिह्वा उनकी कथाओं का कभी वर्णन नहीं करती, वह मेंढक की जिह्वा से बेहतर नहीं। रेशमी पगड़ी अथवा मुकुट से सुशोभित होने पर भी, जो मस्तक कभी भगवान् मुकुन्द — मुक्ति के दाता — के समक्ष नहीं झुकता, वह केवल एक भार है। सोने से अलंकृत होने पर भी, जो हाथ कभी श्रीहरि की उपासना नहीं करते, वे मृत मनुष्य के हाथों के समान हैं। जो नेत्र भगवान् विष्णु के रूपों को कभी नहीं निहारते, वे मयूर की पूँछ पर अंकित नेत्रों के समान निरर्थक हैं — सुन्दर, संभवतः, किन्तु अपने वास्तविक प्रयोजन से अंधे। जो पैर श्रीहरि के पावन स्थलों की कभी यात्रा नहीं करते, वे वृक्ष की जड़ों से भिन्न नहीं, स्थिर तथा किसी सार्थक स्थान तक न पहुँचने वाले।

यह अंश और अधिक मार्मिक होता जाता है। जिस मनुष्य ने भगवान् के भक्तों के चरणों से उठी धूल में कभी स्नान नहीं किया, वह — भागवत कहता है — जीवित रहते हुए भी वस्तुतः मृत है; जिसने भगवान् विष्णु के चरणों में चढ़ाई गई पावन तुलसी की सुगन्ध कभी नहीं जानी, वह श्वास लेता हुआ शव है। और फिर वह श्लोक आता है जो इस सम्पूर्ण शृंखला को उसका भावनात्मक केन्द्र प्रदान करता है।

तदश्मसारं हृदयं बतेदं
यद् गृह्यमाणैर्हरिनामधेयैः ।
न विक्रियेताथ यदा विकारो
नेत्रे जलं गात्ररुहेषु हर्षः ॥ २४ ॥

tad aśma-sāraṁ hṛdayaṁ batedaṁ yad gṛhyamāṇair hari-nāma-dheyaiḥ na vikriyetātha yadā vikāro netre jalaṁ gātra-ruheṣu harṣaḥ

अर्थ: जो हृदय श्रीहरि के नामों के उच्चारण से — चाहे स्वयं द्वारा अथवा दूसरों द्वारा — द्रवित नहीं होता, वह पाषाण के समान कठोर है। और जब हृदय द्रवित होता है, तो नेत्रों में अश्रु उमड़ आते हैं तथा रोमांच हो आता है। (स्कन्ध 2, अध्याय 3, श्लोक 24)

इन श्लोकों को एक साथ पढ़ने पर, इनका उद्देश्य श्रोता को लज्जित करना नहीं, अपितु चौंकाना है — यह आग्रह करना कि भगवान् के नामों को सुनना, कीर्तन करना तथा उनसे प्रभावित होना एक अच्छे जीवन में सजावटी वस्तुएँ नहीं, अपितु उसका वास्तविक सार हैं। जहाँ प्रथम तथा द्वितीय अध्यायों ने दुर्लभ, उन्नत साधक के लिए ध्यान तथा योग-अनुशासन की विस्तृत तकनीकें सिखाई, वहीं यह समापन शृंखला किसी भी क्षण कोई भी व्यक्ति जो कर सकता है, उस पर लौट आती है — सुनना, और हृदय को प्रतिक्रिया देने देना।

अध्याय का अन्तिम वचन — और आगे क्या है

अध्याय किसी आडम्बर के साथ नहीं, अपितु धीरे से समाप्त होता है। यह सब सुनकर, शौनक सूत से कहते हैं कि उनके वचन मन को अत्यन्त प्रिय लगे, और उनसे अनुरोध करते हैं कि अब वे बताएँ कि श्रीशुकदेव ने राजा के उत्तम प्रश्न के उत्तर में परीक्षित से आगे क्या कहा। इस अनुरोध के रखे जाने के साथ, अभी तक उत्तर दिए बिना, कोलोफन आता है — “इस प्रकार तृतीय अध्याय समाप्त होता है,” यह कहता है, “इस महान् एवं गौरवशाली भागवत-पुराण के द्वितीय स्कन्ध में, जिसे परमहंस-संहिता भी कहा जाता है।” राजा का अगला प्रश्न — तथा सृष्टि-रचना का वर्णन करने वाला श्रीशुकदेव का विस्तृत उत्तर — अगले अध्याय, चतुर्थ अध्याय, से सम्बन्धित है, जो इस अध्याय के विषय-क्षेत्र से परे है।

[चित्र 5: images/sbw-c2c03-05-parikshit-child-devotion.jpg — यहाँ लगाएँ]

इस अध्याय की मुख्य शिक्षाएँ

1. परीक्षित के मरणासन्न प्रश्न के प्रति श्रीशुकदेव का उत्तर अब पूर्ण हो चुका है। भगवान् के ब्रह्माण्डीय तथा व्यक्तिगत रूपों पर ध्यान, प्रथम तथा द्वितीय अध्यायों में सिखाया गया, मिलकर मृत्यु के समक्ष विचारशील मनुष्य के कर्तव्य पर उनका सम्पूर्ण उत्तर बना (श्लोक 1)।
2. अनेक देवताओं की उपासना अनेक कामनाओं के लिए की जाती है — और यह अनुचित नहीं है। भागवत लगभग तीस विशिष्ट सांसारिक उद्देश्यों को नामित करता है, प्रत्येक को उसके लिए परम्परागत रूप से उपास्य देवता के साथ, बिना किसी की निन्दा किए (श्लोक 2–9)।
3. फिर भी विवेकी पुरुष सीधे परम पुरुष की उपासना करते हैं। चाहे निष्काम हो, कामनाओं से भरा हो, अथवा मुक्ति ही चाहता हो, उदार बुद्धि वाला व्यक्ति भगवान् की तीव्र भक्ति के साथ उपासना करता है — परम कल्याण, अन्य देवताओं के उपासकों के लिए भी, केवल उन्हीं की भक्ति में मिलता है (श्लोक 10)।
4. भक्ति भक्तों की संगति में परिपक्व होती है। ऐसी संगति में ही, श्रीहरि की कथाएँ सुनते हुए, हृदय शुद्ध होता है, वासना शान्त होती है, तथा भक्ति के प्रति एक अटल प्रेम जड़ पकड़ता है (श्लोक 11–12)।
5. भगवान् की कथा-श्रवण के बिना का जीवन पाशविक अस्तित्व के समान बताया गया है। वृक्ष जीते हैं, धौंकनी श्वास लेती है, पशु भोजन तथा प्रजनन करते हैं — किन्तु जो मनुष्य भगवान् की महिमा कभी नहीं सुनता, नहीं कहता, नहीं स्मरण करता, उसने इस शिक्षा के अनुसार उसी वस्तु को व्यर्थ कर दिया है जो मानव-जीवन को विशिष्ट बनाती है (श्लोक 17–23)।
6. भक्ति का सच्चा चिह्न वह हृदय है जो प्रतिक्रिया देता है। भगवान् के नाम सुनकर नेत्रों में अश्रु तथा रोमांच होना आडम्बर नहीं है; इनकी अनुपस्थिति, भागवत स्पष्ट रूप से कहता है, हृदय को पाषाण के समान कठोर चिह्नित करती है (श्लोक 24)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय के प्रवाह में कुछ चौंकाने वाला है। यह एक सावधान सन्दर्भ-ग्रन्थ के स्वर में आरम्भ होता है — कामना के बाद कामना, देवता के बाद देवता, आवश्यक विषय-वस्तु को ढकने वाले शिक्षक की शान्त सटीकता के साथ प्रस्तुत किए गए। और फिर, बिना किसी चेतावनी के, यह मुड़ता है और श्रोता को दूर देखने नहीं देता — क्या तुम्हारा जीवन वृक्ष से अधिक है, धौंकनी से अधिक, पशु से अधिक? यह प्रश्न ज्ञान, सन्तान,

धन अथवा दीर्घायु के लिए सामान्य मानव-प्रयत्न की निन्दा करने के लिए नहीं पूछा गया — अध्याय ने अभी-अभी नौ श्लोक ठीक उन्हीं प्रयत्नों तथा उनसे सम्बद्ध देवताओं का सम्मान करने में व्यतीत किए हैं। यह इसलिए पूछा गया है कि यह सुनिश्चित किया जा सके कि ऐसे समस्त प्रयत्नों के नीचे, कुछ और तो विस्मृत नहीं हो गया — कि हृदय स्वयं द्रवित होने, प्रतिक्रिया देने, एक नाम से अश्रुपूर्ण होने में सक्षम है। श्रीशुकदेव की यह शिक्षा संसार की अनेक वेदियों की अस्वीकृति नहीं है। यह इस बात का आग्रह है कि प्रत्येक वेदी के पीछे एक ही भगवान् खड़े हैं, और कोई भी कामना, चाहे कितनी भी छोटी हो, तब तक अन्ततः पूर्ण नहीं होती जब तक हृदय उनकी ओर न मुड़े।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज कुछ शान्त क्षण निकालकर, इस अध्याय के वर्णन के अनुसार अपने ही हृदय को देखिए। भगवान् का पावन नाम — “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय” — धीरे-धीरे, बिना जल्दबाज़ी के, उच्चारित अथवा जपिए, और जो भी भीतर उमड़े, उस पर बस ध्यान दीजिए। किसी विशेष भावना को बलपूर्वक उत्पन्न करने की आवश्यकता नहीं है। अध्याय की शिक्षा यह नहीं है कि किसी विशेष प्रदर्शन की आवश्यकता है, अपितु केवल यह कि हृदय को सुगम्य होना चाहिए — इतना कोमल कि उनके नाम की ध्वनि से द्रवित हो सके, जैसा यह अध्याय कहता है कि होना चाहिए। उस शान्त सजगता को आज का अपना अर्पण बनने दीजिए।

उपसंहार

द्वितीय स्कन्ध का तृतीय अध्याय उस दीर्घ यात्रा को पूर्ण करता है जो मृत्यु के समक्ष आत्मा के कर्तव्य के विषय में परीक्षित के प्रश्न से आरम्भ हुई थी, और फिर, उस प्रश्न का पूर्ण उत्तर देने के पश्चात्, यह अपनी दृष्टि एक सार्वभौमिक विषय की ओर विस्तृत करता है — असंख्य कामनाएँ जो मनुष्यों को असंख्य देवताओं की ओर खींचती हैं, तथा वह एक भक्ति जो इन सबका आधार है तथा इन सबसे श्रेष्ठ है। श्रीशुकदेव न तो यहाँ नामित उपासना के अनेक रूपों को अस्वीकार करते हैं, न ही उन्हें अन्तिम लक्ष्य समझने की भूल होने देते हैं। प्रत्येक कामना, अध्याय आग्रह करता है, अपनी सच्ची पूर्ति केवल परम पुरुष में ही पाती है; और इस भक्ति के जड़ पकड़ने का सबसे निश्चित चिह्न कोई सिद्ध की गई तकनीक अथवा सही ढंग से किया गया कर्मकाण्ड नहीं, अपितु एक ऐसा हृदय है जो अब भी — अश्रु से, रोमांच से, आनन्द से — केवल उनका नाम सुनकर प्रभावित हो सके। अध्याय किसी उत्तर के साथ नहीं, अपितु अधिक कथा की एक प्रार्थना के साथ समाप्त होता है, शौनक, सूत तथा पाठक — सभी को यह जानने के लिए उत्सुक छोड़ते हुए कि श्रीशुकदेव आगे क्या कहेंगे।

श्रीमद्भागवतम् की दिव्य विद्या हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), द्वितीय स्कन्ध, तृतीय अध्याय, पृष्ठ 95–98।
- श्रृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम • विश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र जी के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं और उनके अर्थ सार-रूप में दिए गए हैं। यह किसी भी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद अथवा टीका की प्रतिकृति नहीं है। किसी भी प्रकाशक के साथ कोई सम्बद्धता अथवा समर्थन निहित नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-2-adhyay-3-devta-upasana-bhakti-shreshthata.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

